.....जारी है भूख के खिलाफ जंग

by Babulal Naga October 18, 2013

-बाबूलाल नागा- बारां मे पहले की अपेक्षा अभी गरीब आदिवासियों की स्थिति में बदलाव जरूर आया है लेकिन भुखमरी के हालात अभी भी पहले जैसे ही है। आज भी सहरिया और खैरुआ जनजाति के लोग भूख और कुपोषण जनित पीड़ा का दंश झेल रहे हैं। रोटी के लिए संघर्ष का सिलसिला दशकों से बदस्तूर जारी है। उन्हें दो वक्त की रोटी के लिए मशक्कत करनी पड़ रही है।

बारां जिला हर बार कुपोषण, भुखमरी व बंधुआ मजदूरी के कारण चर्चा में रहता आया है। वर्ष 2002 में बारां जिले में अकाल के चलते 18 लोगों की मौत हुई थी जिनमें 12 बच्चे थे। इनमें दो को छोड़कर सारी मौतें एक महीने के दौरान हुई। अकाल के समय लोगों को समा (एक जंगली घास के बीज) की रोटी खाते हुए देखा जाता। लोग समा इसलिए खाते थे क्योंकि खाने के लिए कुछ नहीं होता था, न कि इसलिए कि उन्हें यह स्वादिष्ट लगती। उस दौरान यह घास खाने के बाद एक ही परिवार के तीन लोग चल बसे थे। अकाल के समय लोग फाग उबालकर खाते। यह एक जंगली हरी वनस्पति होती है। लोग इसकी पत्तियां उबालकर खाते। जब खाने को कुछ नहीं होता था तो तब ही वे ऐसा करते थे। पांच लोगों के परिवार के पास आधा किलो से ज्यादा आटा नहीं होता था। इसलिए वे आटे को उबालकर लापसी बनाकर खाते। परिवार के हर सदस्य के हिस्से में एक कटोरी उबला आटा मिलता। छोटे बच्चों को छोड़कर माताएं जमीन खोदकर खाने के लिए जड़ों की तलाश करती। सहरिया जाति अनाज की कमी के कारण जंगल में पैदा होने वाले बेर व छरेटा (पत्ती) भी खाती।

अकाल की इस विभीषिका को एक दशक से ज्यादा समय गुजर गया लेकिन आज भी सहरिया जनजाति के लोग वर्ष भर में करीब चार महीने जंगलों से मिलने वाली घास व पत्तियों पर निर्भर हैं जिन्हें ये हरी सब्जी के रूप में काम में लेते हैं। शाहाबाद तहसील के सांधरी गांव के श्रीचंद सहरिया व रूपचंद सहरिया ने बताया कि महीने में दस पंद्रह दिन ही रोटी के साथ सब्जी खा पाते हैं। बाकी दिनों जंगलों से बिछुड़िया, कूटज का फूल व पुवार तोड़कर लाते हैं। ये सब हरी सब्जी का काम करती है। सनवाड़ा, चोराखाड़ी, हरीनगर, मडी सांभर सिंगा, बीलखेड़ा सहित कई गांवों के सहरियाओं का भी ये ही कहना था। जंगल में पैदा होने वाली हरी सब्जी के रूप में पवार, सरेटा, बीछोता, पांग, बासी, कुटज का फूल व सेजन का फूल जंगलों से लाकर काम में लेते हैं। सामान्यतः जुलाई से अक्टूबर माह तक इन्हें जंगलों से ये सब मिल जाते हैं। बरसात के दौरान जंगल व चरागाह भूमि पर बड़ी मात्रा में यह घास व फूल पत्ती उग आती है। जिनका इस्तेमाल सहरिया अपनी भूख मिटाने के लिए करते हैं। जिस दिन जंगलों से ये सब न मिले उस दिन बिना सब्जी के रोटी खानी पड़ती है।

अभावों से जूझ रहे इन सहरियाओं के लिए जंगलों से प्राप्त ये घास फूस भोजन का जरिया बने हुए हैं। किशनगंज क्षेत्र के सुवांस गांव में गेहूं के जुगाड़ के लिए लोग सुवा घास की छंटाई कर पौधे की एक एक शाख (डाल) को अलग करते हैं। लोग इस घास को काट पौधे की शाखाओं को अलग अलग कर सुखाते हैं। बाद में इसके डेढ़ से दो किलो वजन के पूले (गट्ठर) बना मध्यप्रदेश के मकड़वदा में ले जाते हैं, जहां उन्हें पूले के वजन के बराबर गेहूं देते हैं। सुवांस ग्राम पंचायत समेत क्षेत्र के आधा दर्जन गांवों के लोगों की कमोबेश यही दिनचर्या है। जंगलों से मिलने वाली वनस्पति इनके आय का जरिया भी बनी हुई है। अप्रैल से अक्टूबर तक जंगलों से गोंद तोड़ते हैं। एक दिन में औसतन एक किलो गोंद तोड़ लेते हैं। सौ से डेढ़ सौ रुपए किलो के भाव से ये गोंद बेचते हैं। सीजन के चार पांच महीने में औसतन एक परिवार गोंद से चार पांच हजार रुपए की आमदनी कर लेता है।

औरतों के पहुंच से दूर रोटी

सामान्यतः लोग गेहूं, बाजरा व मक्का का प्रयोग करते हैं। इस समय इन्हें दो वक्त का भरपेट भोजन भी नहीं मिल पा रहा है। सबसे बुरा असर छोटे बच्चों व महिलाओं पर पड़ रहा है। सहरिया व खैरुआ औरतों की स्थिति पुरुषों के मुकाबले कहीं ज्यादा दयनीय और चिंताजनक है। औरतों को रोटी की जबरदस्त किल्लत का सामना करना पड़ता है। परिवार में जब भी भूखे रहने की बात आती है तो उसका पहला भार इन औरतों पर पड़ता है। जब खाना कम पड़ जाए तो परिवार में औरत को ही भूखा रहना पड़ता है। " विविधा महिला आलेखन एवं संदर्भ केंद्र" की ओर से पिछले दिनों किए गए एक अध्ययन से एक बात स्पष्ट उभर कर सामने आई कि रोजी रोटी के इर्द गिर्द घूमती इन सहरिया व खैरुआ औरतों की जिंदगी के दूसरे सभी पक्ष इसी से नियंत्रित हो रहे हैं। आजीविका की अनिश्चता शरीर को एक तरह से प्रभावित कर

रही है तो मन को दूसरी तरह से। घर में सबसे अंत में खाने वाली औरत अनिश्चितता की स्थिति में सबसे पहले खुद के खाने में कटौती करती है। खाने की यह कटौती उसको कुपोषण की तरफ धकेलती है, कुपोषण बीमारी की तरफ।

क्षेत्र की करीब 100 सहरिया महिलाओं से उनके खान पान को लेकर सवाल किए गए। औरतों ने बताया कि जापे में पौष्टिक आहार उन्हें नहीं दिया जाता। पशु हैं तो भी दूध और छाछ का प्रयोग इनके भोजन से गायब है। पुरुषों के खाने पर अधिक ध्यान दिया जाता है। बेटी बेटा के खान पान में भी अंतर है। इस कारण महिलाओं के हिस्से बचा कुचा अपर्याप्त और बासी खाना ही आता है। दूध सिर्फ 40 प्रतिशत महिलाएं उपयोग में लेती हैं। अधिकांशतः बाद में भोजन करने वाली औरतों को जरूरत के अनुसार हर चीज नहीं मिल पाती। अगर सब्जी नहीं बचती या चपाती कम होती है तो कम या चटनी से खा लेती हैं। कभी पूरा खाना मिल जाता है तो कभी नहीं मिल पाता।

अनाज के बदले सामान

रोजमर्रा की अन्य जरूरतों को पूरा करने के लिए सहरियाओं को अनाज बेचकर सामान खरीदने को मजबूर होना पड़ रहा है। किसी दुकान से 5 रुपए का कोई सामान खरीदना हो तो सहरिया लोग मुट्ठीभर अनाज लेकर या किसी गठरी में गेहूं बांधकर किराने की दुकान पर पहुंच जाते हैं। अनाज के बदले पैसा लेने की बजाय जरूरत की चीजें चीनी, चाय, माचिस, बिस्कुट, तेल आदि खरीदते हैं। सनवाड़ा में किराने की दुकान करने वाले अनिल गुप्ता ने बताया कि औसतन दिनभर में 15 से 20 किलो अनाज आ जाता है। यह गेहूं 10 रुपए किलो के हिसाब से लेते हैं और तय राशि का सामान दे देते हैं। हालांकि यही गेहूं दुकानदार 15 रुपए किलो में किसी बड़े सेठ या अनाज मंडी में बेच देता है।

राशन कार्ड रख देते हैं गिरवी

बाबूलाल नागा

बारां जिले के किशनगंज तहसील की बींची ग्राम पंचायत के मोहनपुर गांव की सहरिया बस्ती के करीब 15 परिवारों के राशनकार्ड आज भी किसी जमींदार, साहूकार या राशन डीलर के पास गिरवी रखे हुए हैं। इस बस्ती में 30 सहरिया परिवार निवास करते हैं। भुखमरी व गरीबी के कुचक्र में फंसे इन सहरियाओं को पैसों की जरूरत होने पर अपने राशनकार्ड गिरवी रखना पड़ रहा है। राशन कार्ड गिरवी रखने पर इन्हें पैसा मिल जाता है। जमींदारों के यहां राशन कार्ड रखकर पैसा ले लेते हैं। पैसा जब तक नहीं चुकता तब तक उसके यहां हाली का काम करेंगे। राशन डीलर भी सहरियाओं के राशनकार्ड अपने कब्जे में करके पैसे उधार दे देता हैं। राशन डीलर उस राशन कार्ड से उनका राशन उठा लेता है। एक राशनकार्ड पर राशन के अनुसार पैसे तय किए जाते हैं। गिरवी रखा राशनकार्ड कई दिनों तक यूंहि किसी के पास रखा रहेगा। (यह रिपोर्ट इंक्लूसिव मीडिया फैलोशिप के अध्ययन का हिस्सा है)

0 1 3